[2002] 2 उम. नि. प. 247

डैनियल लतीफ़ी और अन्य

बनाम

भारत संघ

28 सितंबर, 2001

न्यायमूर्ति जी. बी. पटनायक, न्यायमूर्ति एस. राजेन्द्र बाबू, न्यायमूर्ति डी. पी. महापात्र, न्यायमूर्ति दुरईस्वामी राजू और न्यायमूर्ति शिवराज वी. पाटिल

मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 (1986 का 25) – धारा 3 और 4 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 125] – अधिनियम का अधिनियमन – उद्देश्य – व्याप्ति – शाह बानो वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि यद्यपि मुस्लिम स्वीय विधि पति के दायित्व को अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को इद्दत की अवधि के लिए भरण-पोषण प्रदान करने तक परिसीमित करती है तथापि यह उस स्थिति को अनुध्यात नहीं करती जो 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 द्वारा परिकल्पित है – चूंकि यह विनिश्चय मुस्लिम पति पर अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को भरण-पोषण का संदाय करने के लिए दायित्व अधिरोपित करता है इसलिए संसद ने किसी मुस्लिम स्त्री के अधिकार को विवाह-विच्छेद के समय भरण-पोषण संदत्त करने के लिए और उसके अधिकारों के संरक्षण के लिए उपबंध किया ।

मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 – धारा 3 और 4 [सपठित संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14, 15 और 21] – अधिनियम की सांविधानिक विधिमान्यता – व्याप्ति – अधिनियम में मजिस्ट्रेट को भरण-पोषण के लिए समुचित उपबंध करने के लिए शक्ति प्रदत्त की गई है और इसलिए पूर्व में मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन जो भरण-पोषण मंजूर कर सकता था वह अब अधिनियम के अधीन भी मंजूर कर सकता है – अतः अधिनियम को असांविधानिक और संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 का अतिक्रमणकारी नहीं कहा जा सकता ।

मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के पश्चात् लोगों की व्यापक प्रतिक्रिया को देखते हुए संसद ने मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 अधिनियमित किया । याचियों और कुछ समाज सेवी संगठनों ने उक्त अधिनियम की सांविधानिक विधिमान्यता को आक्षेपित करते हुए ये रिट याचिकाएं फाइल कीं । रिट याचिकाएं खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मुस्लिम स्त्री (विवाह-विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 को अधिनियमित करने का उद्देश्य जैसा कि अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों के कथन में कहा गया है, यह है कि इस न्यायालय ने शाह बानो वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि मुस्लिम विधि विवाह-विच्छिन्न पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने के लिए पति के दायित्व को इद्दत की अवधि तक परिसीमित करती है किन्तु इससे दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 द्वारा परिकल्पित स्थिति का अनुध्यान या समाधान नहीं होता और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि मुस्लिम पति अपनी स्वीय विधि के अनुसार अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नियों को जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, इद्दत की अवधि के बाद भरण-पोषण प्रदान करने के लिए बाध्यताधीन नहीं है । जैसा कि शाह बानो वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था कि सही स्थिति यह है कि यदि विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपना भरण-पोषण करने में समर्थ है तो पति का उसे भरण-पोषण प्रदान करने के लिए दायित्व इद्दत की अवधि के पर्यवसान पर समाप्त हो जाता है किन्तु यदि वह इद्दत की अवधि के पश्चात् स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का आश्रय लेने की हकदार है। अतः यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसी विवाह-विच्छिन्न पत्नी

को जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, भरण-पोषण प्रदान करने के लिए मुस्लिम पति के दायित्व के प्रश्न पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंधों और मुस्लिम स्वीय विधि के उपबंधों के बीच कोई विवाद नहीं है। यह मत इस न्यायालय द्वारा बाई ताहिरा बनाम अली हुसैन फिदा अली चौछिया और फजलुन बी. बनाम के. कादर वली और एक अन्य वाले मामले में दिए गए अन्य दो पूर्वतर विनिश्चयों के अनुसार ही है। इस न्यायालय ने शाह बानो वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि मुस्लिम स्वीय विधि पति के दायित्व को अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को इद्दत की अवधि के लिए भरण-पोषण प्रदान करने तक परिसीमित करती है तथापि यह उस स्थिति को अनुध्यात नहीं करती जो 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 द्वारा परिकल्पित है। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह गलत या अन्यायपूर्ण नहीं होगा यदि मुस्लिम विधि के उपर्युक्त सिद्धांत को ऐसे मामलों तक विस्तारित किया जाए जिनमें कोई विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है और इसलिए न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि यदि विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपना भरण-पोषण करने में समर्थ है तो पति का दायित्व इद्दत की अवधि के पर्यवसान तक सीमित रहता है किन्तु यदि वह इद्दत की अवधि के पश्चात् अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का आश्रय लेने की हकदार है। चूंकि यह विनिश्चय मुस्लिम पति पर अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को भरण-पोषण का संदाय करने के लिए दायित्व अधिरोपित करता है इसलिए संसद ने किसी मुस्लिम स्त्री के अधिकार को विवाह-विच्छेद के समय भरण-पोषण संदत्त करने के लिए और उसके अधिकारों के संरक्षण के लिए उपबंध किया। (पैरा 8, 9 और 18)

हमारे समाज में, चाहे वह बहुसंख्यक समूह से संबंधित हो या अल्पसंख्यक समूह से, जो स्पष्ट है वह यह है कि एक पुरुष और एक स्त्री के बीच आर्थिक साधन संपन्नता के मामले में पूर्ण असमानता विद्यमान है। हमारा समाज आर्थिक और सामाजिक दोनों ही रूप से पुरुष प्रधान (शासित) समाज है और स्त्रियों को निरपवाद रूप से समाज के ऐसे वर्ग को जिससे कि वह (स्त्री) संबंधित है, ध्यान में रखे बिना एक आश्रयी भूमिका सौंपी गई है। किसी स्त्री को उसका विवाह होते ही प्रायः अपने सभी अन्य पेशे त्यागने पड़ते हैं भले ही वह अत्यधिक शिक्षित हो और वह अपने कुटुम्ब के कल्याण के लिए अपने को पूर्णतया तल्लीन कर लेती है विशेषतया वह अपनी संवेदनाओं, भावनाओं, विवेक और शरीर को अपने पति के साथ बांटती है और विवाह में उसका विनिधान उसका संपूर्ण जीवन है जो उसके द्वारा अपने व्यक्तित्व का सांस्कारिक त्याग है और यदि इसे धन के रूप में मापा जाए तो यह एक बहुत बड़ा त्याग है। यदि किसी भी प्रकार से इस प्रकृति की नातेदारी टूट जाए तो इस बात के लिए कोई उत्तर नहीं हो सकता कि क्या हम उसके संवेदनात्मक भंग या विनिधान संबंधी हानि को प्रतिकारित कर सकते हैं। यह कहना केवल सांत्वना देना होगा कि ऐसी किसी स्त्री को उसकी आजीविका के संबंध में धन से प्रतिकारित किया जाना चाहिए और ऐसे कोई अनुतोष जिसमें लिंग और सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए मूल मानव अधिकार सम्मिलित हैं, सार्वभौम रूप से सभी धर्मों से संबंधित व्यक्तियों द्वारा स्वीकार किए गए हैं और यह महसूस करना कठिन है कि मुस्लिम विधि वैवाहिक जीवन से असंबंधित ऐसे व्यक्तियों को यथा ऐसे उत्तराधिकारी को जिन्हें ऐसी स्त्री की संपत्ति विरासत में प्राप्त हो सकती है तथा वक्फ बोर्डों को भिन्न प्रकार का दायित्व प्रदान करने के लिए अभिप्रेत है। न्यायालय को ऐसा कोई विचार सामाजिक तथ्यों का एक प्रकार का तोड़-फोड़ प्रतीत होता है। मूल मानव अधिकारों, संस्कृति, गरिमा और जीवन की मर्यादा के क्षेत्रों से संबंधित सार्वभौम महत्व की ऐसी सामाजिक समस्याओं के हल को और सामाजिक न्याय की पृष्ठभूमि में आवश्यकता संबंधी अधिदेशों को निरपवाद रूप से धर्म या धार्मिक विश्वास या विश्वासों या राष्ट्रीय, साम्प्रदायिक, जातीय अथवा साम्प्रदायिक प्रतिबंधों से भिन्न बातों के आधार पर विनिश्चित किए जाने के लिए छोड़ देना चाहिए। यहां अधिनियम की व्याप्ति को समझने के लिए इसके उपबंधों का विश्लेषण करना आवश्यक होगा। अधिनियम की उद्देशिका में यह उल्लिखित है कि यह अधिनियम उन मुस्लिम स्त्रियों के अधिकारों का संरक्षण करने के लिए, जिनका उनके पति द्वारा विवाह-विच्छेद हो गया है या जिन्होंने अपने पति से विवाह-विच्छेद प्राप्त कर लिया हो और उससे संबद्ध या उसके आनुषांगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियमित किया गया है। 'विवाह-विच्छिन्न स्त्री' को अधिनियम की धारा 2(क) के अधीन परिभाषित किया गया है जिससे 'विवाह-विच्छिन्न स्त्री' से ऐसी मुस्लिम स्त्री अभिप्रेत है जिसका मुस्लिम विधि के अनुसार विवाह हुआ था

और जिसका, मुस्लिम विधि के अनुसार, उसके पति द्वारा विवाह-विच्छेद किया गया है, या जिसने अपने पति से विवाह विच्छेद प्राप्त कर लिया हो; 'इद्दत की अवधि' अधिनियम की धारा 2(ख) के अधीन परिभाषित है जिससे किसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री की दशा में निम्न अभिप्रेत है – (i) यदि उसका ऋतुस्राव होता है, तो विवाह-विच्छेद की तारीख के पश्चात् तीन ऋतुस्राव; (ii) यदि उसका ऋतुस्राव नहीं होता है तो उसके विवाह-विच्छेद के पश्चात् तीन चन्द्रमास; और (iii) यदि वह अपने विवाह-विच्छेद के समय गर्भवती है तो विवाह-विच्छेद और उसके संतान के जन्म या उसके गर्भ के समापन के बीच की अवधि, इनमें जो भी पूर्वतर हो। अधिनियम की धारा 4 में यह उपबंध है कि इस अधिनियम के पूर्वगामी उपबंधों या तत्समय प्रवृत्त या किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी जहां मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाता है कि विवाह-विच्छिन्न स्त्री ने पुनर्विवाह नहीं किया है और वह इद्दत की अवधि के पश्चात् अपना भरण-पोषण करने में समर्थ नहीं है वहां वह उसके ऐसे नातेदारों को, जो उसकी मृत्यु पर मुस्लिम विधि के अनुसार उसकी संपत्ति के उत्तराधिकारी होने के हकदार होंगे, विवाह-विच्छिन्न स्त्री की आवश्यकताओं, उसके विवाह के दौरान उसके द्वारा उपभोग किए गए जीवन-स्तर और ऐसी नातेदारों के साधन को ध्यान में रखते हुए, यह निदेश देते हुए आदेश कर सकेगा कि वे ऐसे युक्तियुक्त और ऋजु भरण-पोषण का, जो वह ठीक और उचित अवधारित करे, उसको संदाय करें और ऐसा भरण-पोषण ऐसे नातेदारों द्वारा उसी अनुपात में, जिसमें वे उसकी संपत्ति के उत्तराधिकारी होंगे और ऐसी अवधियों पर संदत्त किया जाएगा जैसी वह अपने आदेश में विनिर्दिष्ट करे। यदि कोई नातेदार आदिष्ट भरण-पोषण का संदाय करने के लिए आवश्यक साधन नहीं रखता है तो मजिस्ट्रेट यह आदेश कर सकता है कि उसके द्वारा आदिष्ट भरण-पोषण में ऐसे नातेदारों का अंश ऐसे अन्य नातेदारों द्वारा जिनके बारे में मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत हो कि उनके पास उसका संदाय करने के साधन हैं, ऐसे अनुपात में संदत्त किया जाए जैसा मजिस्ट्रेट आदेश करना ठीक समझे। जहां कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है और उपधारा (1) में यथा विनिर्णीत उसके कोई नातेदार नहीं है या ऐसे नातेदारों अथवा उनमें से किसी के पास मजिस्ट्रेट द्वारा आदिष्ट भरण-पोषण का संदाय करने के पर्याप्त साधन नहीं हैं या अन्य नातेदारों के पास उन नातेदारों के अंशों का संदाय करने के साधन नहीं है जिनके अंशों का ऐसे अन्य नातेदारों द्वारा संदाय किए जाने के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा उपधारा (1) के दूसरे परन्तुक के अधीन आदेश किया गया है वहां मजिस्ट्रेट राज्य वक्फ बोर्ड को जो उस क्षेत्र में जिसमें वह स्त्री वास करती है, कार्य कर रहा हो, यथास्थिति ऐसे भरण-पोषण का संदाय, जो उपधारा (1) के अधीन उसके द्वारा अवधारित किया जाए या ऐसे नातेदारों के, जो संदाय करने में असमर्थ है, अंशों का संदाय ऐसी अवधियों पर करने का निदेश दे सकेगा जो वह आदेश में विनिर्दिष्ट करे। तथापि यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा कि अधिनियम की धारा 4 केवल 'भरण-पोषण' के संदाय के संबंध में निर्देश करती है और यह अधिनियम की धारा 3(1)(क) में निर्दिष्ट पति द्वारा दिए जाने वाले 'उपबंध' के संबंध में कोई निर्देश नहीं करती। अधिनियम के परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि अधिनियम मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के परिधि के बाहर रखकर सम्यक् बाध्यताओं को संहिताबद्ध और विनियमित करता है क्योंकि 'विवाह-विच्छिन्न स्त्री' को ऐसी मुस्लिम स्त्री के रूप में परिभाषित किया गया है जिसका मुस्लिम विधि के अनुसार उसके पति द्वारा विवाह-विच्छेद किया गया है या जिसने अपने पति से विवाह-विच्छेद प्राप्त कर लिया है। किन्तु अधिनियम ऐसी किसी मुस्लिम स्त्री को लागू नहीं होता जिसका विवाह या तो भारतीय विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के अधीन हुआ हो अथवा ऐसी कोई मुस्लिम स्त्री जिसका विवाह भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1969 या भारतीय विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के अधीन विघटित हुआ हो। अधिनियम अभित्यक्त पृथकृत: मुस्लिम पत्नियों को लागू नहीं होता। अधिनियम के अधीन भरण-पोषण पति द्वारा इद्दत की अवधि के दौरान संदत्त किया जाएगा और इस बाध्यता को इद्दत की अवधि के पश्चात् तक विस्तारित नहीं किया गया है। जब एक बार इद्दत की अवधि के पर्यवसान के साथ पति के साथ नातेदारी समाप्त हो जाती है तो जिम्मेदारी विच्छिन्न विवाह स्त्री के नातेदारों पर चली जाती है। अधिनियम में यह अवधारित करने में मुस्लिम स्वीय विधि का अनुसरण किया गया है कि किन परिस्थितियों में कौन सा नातेदार दायित्वाधीन है। यदि कोई नातेदार नहीं है अथवा कोई नातेदार विवाह-विच्छिन्न स्त्री को संदाय करने योग्य नहीं है तो न्यायालय भरण-पोषण के संदाय के लिए राज्य वक्फ बोर्ड को आदेश कर सकता है।

सहमत हैं कि अधिनियम के अधीन भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंध लागू होते हैं और अन्यथा भी मजिस्ट्रेट को भरण-पोषण के लिए समुचित उपबंध करने के लिए शक्ति प्रदत्त की गई है और इसलिए पूर्व में मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन जो भरण-पोषण मंजूर कर सकता था वह अब अधिनियम के अधीन भी मंजूर कर सकता है। इस स्थिति को देखते हुए अधिनियम को असांविधानिक नहीं माना जा सकता। जिस तारीख को अधिनियम प्रवृत्त हुआ उस तारीख को मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को इस न्यायालय द्वारा शाह बानो वाले मामले में घोषित विधि लागू होती थी। वर्तमान मामले में विवाह-विच्छिन्न स्त्री के अधिकारों के संबंध में मुस्लिमों की स्वीय विधि का पता लगाने के लिए आरंभिक बिन्दु शाह बानो वाला मामला होना चाहिए न कि मूल पाठ्य-पुस्तकें या ऐसी अन्य सामग्री जिनमें से अधिकतर के अधिप्रमाणन के बारे में अलग-अलग कथन मौजूद हैं। अतः हम इनका विस्तारपूर्वक निर्देश नहीं कर रहे हैं। विनिश्चय पवित्र कुरान और अन्य समीक्षाओं तथा विभिन्न पाठ्य-पुस्तकों पर विचार करने के पश्चात् दिया गया था। जब इस न्यायालय की एक संविधान न्यायपीठ ने पवित्र कुरान के अध्याय 2 की सूरह 241-242 और अन्य सुसंगत पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री का विश्लेषण करने के पश्चात् विनिश्चय दिया तो न्यायालय यह नहीं समझता कि इस स्थिति की पुनः परीक्षा करनी चाहिए और किसी दूसरे निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अनुसंधान करना चाहिए। इसमें जो कुछ कहा गया है, हम ससम्मान उसका अनुसरण करते हैं। उक्त मामले में अधिकथित सिद्धान्त पर प्रभाव डाले बिना जिस बात पर विचार किए जाने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या अधिनियम में स्वीय विधियों से विनिर्दिष्ट विचलन किया गया है जैसा कि शाह बानो वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है। न्यायालय ने सावधानीपूर्वक इसका विश्लेषण किया और न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि वस्तुतः और यथार्थतः अधिनियम में वही संहिताबद्ध किया गया है जो शाह बानो वाले मामले में कहा गया था। विद्वान महा सालिसिटर ने यह दलील दी कि अधिनियम से संबंधित विधेयक में जो उद्देश्य और कारण अभिकथित किए गए हैं वह सही हैं और हमें उन्हें सही मानना चाहिए। न्यायालय ने शाह बानो वाले मामले के तथ्यों और इसमें अधिकथित विधि का विश्लेषण किया और अब न्यायालय इसका अधिनियम पर प्रभाव का पता लगाने के लिएं अग्रसर होता है। जैसा कि न्यायालय उल्लेख कर चुका है कि यदि अधिनियम की भाषा पर विचार किया जाए तो इस तथ्य का कि विधान मंडल ने विधि अधिनियमित करने में कतिपय तथ्यों की अवेक्षा की है, अधिक महत्व नहीं रह जाता। यह नहीं कहा जा सकता कि दंड प्रक्रिया संहिता के लाभकारी उपबंधों के अधीन विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्रियों का अपने पूर्व पतियों से भरण-पोषण के अधिकार का जो अन्यथा भारत में अन्य सभी स्त्रियों को उपलब्ध है ऐसा अपवंचन युक्तियुक्त, सही, न्यायोचित और ऋजु विधि द्वारा प्रभावित होता है और यदि ये उपबंध दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 9 के उपबंधों की अपेक्षा कम लाभकारी हैं तो किसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री के साथ स्पष्टतया अयुक्तियुक्त रूप से विभेद किया गया है और उसे संहिता के अधीन यथा उल्लिखित साधारण विधि के उन उपबंधों का संरक्षण मिलना चाहिए जो हिन्दू, जैन, पारसी या ईसाई स्त्रियों को या किसी अन्य समुदाय से संबंधित स्त्रियों को उपलब्ध हैं। अतः उपबंध प्रथम दृष्ट्या संविधान के अनुच्छेद 14 का जो अन्यथा समान परिस्थितियों वाले सभी व्यक्तियों के लिए समानता और विधि के समान संरक्षण की आज्ञा देता है, अतिक्रमणकारी प्रतीत होते हैं और यह संविधान के अनुच्छेद 15 के जो धर्म के आधार पर विभेद को प्रतिषिद्ध करता है, भी अतिक्रमण में हैं क्योंकि अधिनियम स्पष्ट रूप से मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को उनके मुस्लिम धर्म से संबंधित होने के आधार पर ही लागू होता है। यह सुस्थापित है कि अर्थान्वयन के नियम के आधार पर ही यह कानून अधिकारातीत या 'असांविधानिक' बन जाएगा और इसलिए शून्य होगा जबकि दूसरे अर्थान्वयन के आधार पर जो अनुज्ञेय है कानून प्रभावी और प्रवर्तनशील रहेगा और न्यायालय इस आधार पर पश्चात्वर्ती को अधिमान देगा कि विधानमंडल का असांविधानिक विधियां अधिनियमित करने का आशय नहीं हो सकता। न्यायालय का यह मत है कि पश्चात्वर्ती निर्वचन स्वीकार किया जाना चाहिए और इसलिए न्यायालय द्वारा किए गए निर्वचन का परिणाम यह निकलता है कि अधिनियम की विधिमान्यता की पुष्टि की जाए। यह सुस्थापित है कि जहां किसी अधिनियमिती के समुचित परिशीलन द्वारा अधिनियम की विधिमान्यता की पुष्टि की जा सकती हो वहां न्यायालयों द्वारा ऐसा निर्वचन ही स्वीकार्य होता है न कि अन्य कोई निर्वचन। न्यायालय अधिनियम की विधिमान्यता की पुष्टि करते हुए अपने निष्कर्षों का संक्षेप में इस प्रकार उल्लेख करना चाहेगा – (1) कोई मुस्लिम

पति विवाह-विच्छिन्न पत्नी के भविष्य के लिए युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध करने का दायी है और इसमें स्पष्ट रूप से उसका भरण-पोषण सम्मिलित है। इद्दत अवधि से बाद के लिए ऐसा कोई युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध पति द्वारा अधिनियम की धारा 3(1)(क) के निबंधनों में इद्दत अवधि के भीतर दिया जाना चाहिए। (2) अधिनियम की धारा 3(1)(क) के अधीन मुस्लिम पति का अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी के लिए उद्भूत भरण-पोषण के संदाय का दायित्व इद्दत की अवधि तक निर्बंधित नहीं है। (3) कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री जिसने पुनर्विवाह नहीं किया है और जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, अधिनियम की धारा 4 के अधीन यथा उपबंधित अपने ऐसे नातेदारों के विरुद्ध कार्यवाही कर सकती है जो संपत्तियों के अनुपात में उसका भरण-पोषण करने के जिम्मेदार हैं और जिन्हें मुस्लिम विधि के अनुसार ऐसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री की मृत्यु पर विरासत मिलेगी और इसमें उसके बच्चे तथा माता-पिता भी सम्मिलित हैं। यदि कोई नातेदार भरण-पोषण का संदाय करने में असमर्थ हो तो मजिस्ट्रेट भरण-पोषण के संदाय के लिए अधिनियम के अधीन स्थापित राज्य वक्फ बोर्डों को निदेश कर सकेगा। (4) अधिनियम के उपबंध भारत के संविधान के अनुच्छेद 14,15 और 21 के अतिक्रमणकारी नहीं है। (पैरा 21, 22, 24, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33 और 36)

अनुसृत निर्णय

		पैरा
[2000]	2000 क्रि. ला जर्नल 3560 : **करीम अब्दुल शेख** बनाम **शहनाज करीम शेख;**	35
[1999]	1999 (3) एम. एल. जे. 694 : **जैतून बी मुबारक शेख** बनाम **मुबारक फखरुद्दीन शेख;**	35
[1998]	1998 क्रि. ला जर्नल 3433 : **अब्दुल हक** बनाम **यासिमा तलत;**	35
[1995]	1995 क्रि. ला जर्नल 3371 : **के. कुन्हाशिद हाजी** बनाम **अमीना;**	35
[1993]	(1993) I डी. एम. सी. 60 : **मोहम्मद मराहीम** बनाम **रज़िया बेगम;**	35
[1992]	1992 क्रि. ला जर्नल 76 : **अब्दुल रशीद** बनाम **सुलताना बेगम;**	35
[1990]	1990 क्रि. ला जर्नल 1364 : **उमर खां बहमामी** बनाम **फतीमुन्निसा;**	35
[1988]	(1988) II डी. एम. सी. 468 : **के. जैनुद्दीन** बनाम **अमीना बेगम;**	35
[1988]	(1988) 3 क्राइम्स 147 : **अली** बनाम **सुफैरा;**	35
[1988]	ए. आई. आर. 1988 गुजरात 141 : **अरब अहमदिया अब्दुल्ला और अन्य** बनाम **अरब बेल मोहमूना सय्यद भाई और अन्य** ।	35

के उपबंधों के अधीन दायित्व से मुक्ति हो जाएगी। इस न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह मत व्यक्त किया कि दंड प्रक्रिया संहिता ऐसे मामलों में कार्यवाहियों को नियंत्रित करती है और पक्षकारों की स्वीय विधि पर अभिभावी होती है। यदि व्यक्तियों के अधिकारों और दायित्वों के संबंध में संहिता के निबंधनों के अन्तर्गत कोई विवाद हो तो पश्चात्‌वर्ती अभिभावी होगी। इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि मेहर विवाह-विच्छेद के मुकाबले विवाह से अधिक संबंधित है भले ही मेहर या इसके किसी बड़े भाग का विवाह-विघटन के समय चाहे यह मृत्यु द्वारा हो या विवाह-विच्छेद द्वारा, प्रायिक रूप से संदाय कर दिया गया हो । यह तथ्य दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के संदर्भ में सुसंगत है भले ही यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 (3)(ख) के संदर्भ में सुसंगत न हो। अतः इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह एक ऐसी धनराशि है जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 (3)(ख) के अर्थान्तर्गत विवाह-विच्छेद पर संदेय है और यह अभिनिर्धारित किया कि मेहर एक ऐसी धनराशि है जो अधिनियम के अधीन पति के दायित्व को स्वतः निर्मुक्त नहीं कर सकती।

5. आगे इस प्रश्न पर विचार किया गया था कि क्या मेहर की धनराशि भरण-पोषण आदेश के लिए कोई युक्तियुक्त विकल्प गठित करती है। यदि मेहर इस प्रकार की धनराशि नहीं है तो यह पति को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 (3)(ख) के प्रवर्तन से मुक्त नहीं कर सकती किन्तु उस दशा में मेहर स्त्री को उपलब्ध स्रोतों का भाग है और भरण-पोषण आदेश तथा भरण-पोषण के परिमाण के लिए पत्नी की पात्रता पर विचार करने में हिसाब (गणना) में लिया जाएगा। इस प्रकार इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि विवाह-विच्छिन्न स्त्रियां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अपने पूर्व पतियों के विरुद्ध भरण-पोषण-आदेश के लिए आवेदन करने की हकदार थीं और ऐसे आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 (3)(ख) के अधीन वर्जित नहीं थे। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के प्रवर्तन से विवर्जित किए जाने के लिए पति का संपूर्ण मामला इस दावे पर आधारित था कि मुस्लिम विधि पत्नी को देय किसी मेहर और इद्दत अवधि के दौरान भरण-पोषण से संबंधित किसी धनराशि के संदाय के सिवाय उसकी विवाह-विच्छिन्न पत्नी के लिए किसी भी जिम्मेदारी से मुक्त करती है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 (3)(ख) इस सिद्धांत को कानूनी मान्यता प्रदत्त करती है। विभिन्न मुस्लिम संगठनों ने भी, जिन्होंने मामले में मध्यक्षेप किया था, दलीलें दीं। कुछ मुस्लिम सामाजिक कार्यकर्ताओं ने, जो मामले में मध्यक्षेपियों के रूप में उपस्थित हुए, यह कहते हुए 'मता' के विवाद्यक के प्रश्न पर पत्नी का समर्थन किया कि मुस्लिम विधि किसी मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को इद्दत अवधि के पश्चात् अपने पति से भरण-पोषण पाने हेतु दावा करने के लिए हकदार बनाती है। अतः इस न्यायालय के समक्ष विवाद्यक यह था – पति ने इस आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127(3)(ख) का अवलंब लेते हुए मुक्ति का दावा किया था कि चूंकि उसने अपने पत्नी को छोड़ दिया था इसलिए ऐसी सम्पूर्ण धनराशि, जो पक्षकारों को लागू मुस्लिम विधि के अधीन देय थी, ऐसे विवाह-विच्छेद के समय देय थी ज़बकि स्त्री की दलील यह थी कि उसे उसके पति ने सम्पूर्ण धनराशि संदत्त नहीं की थी बल्कि उसने केवल मेहर और इद्दत भरण-पोषण संदत्त किया था और 'मता' अर्थात् पवित्र कुरान के अध्याय II सूरह 241 में निर्दिष्ट उपबंध (सम्भरण) या भरण-पोषण नहीं दिया था। इस न्यायालय ने मुस्लिम विधि पर विभिन्न पाठ्य-पुस्तकों का निर्देश करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि विवाह-विच्छिन्न पत्नी का भरण-पोषण का अधिकार इद्दत अवधि के पर्यवसान पर समाप्त हो जाता है किन्तु इस न्यायालय ने आगे यह मत व्यक्त किया कि इन कथनों में दर्शित साधारण प्रतिपादनाएं ऐसी विशिष्ट परिस्थिति पर विचार नहीं करतीं जहां विवाह-विच्छिन्न पत्नी स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। ऐसे मामलों में यह कहा गया था कि इन पाठ्य-पुस्तकों में निर्दिष्ट कथनों के क्षेत्र को विस्तारित करना न केवल ठीक ही नहीं होगा बल्कि अन्यायपूर्ण होगा जिनमें विवाह-विच्छिन्न पत्नी स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है और यह मत व्यक्त किया कि विधि के इन कथनों का प्रवर्तन करना केवल उन मामलों तक निर्बंधित किया जाना चाहिए जिनमें विवाह-विच्छिन्न पत्नी की दरिद्रता से उद्‌भूत आवारगी या अकिंचनता की संभावना न हो। इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि इन आयतों (पवित्र कुरान, अध्याय II सूरह 241-242) से इस बात की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती कि पवित्र कुरान द्वारा मुस्लिम पति पर अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को उपबंध (सम्भरण) प्रदान करने या भरण-पोषण देने के लिए बाध्यता डाली गई है। दी गई प्रतिकूल दलील पवित्र कुरान

के आदेश से सुसंगत नहीं है। इस टिप्पण के आधार पर इस न्यायालय ने अपना निर्णय दिया।

6. तत्पश्चात् व्यापक रूप से हंगामा हुआ था और सम्भवतः संसद ने **शाह बानो**[1] वाले मामले के विनिश्चय को निष्प्रभावी बनाने के आशय से अधिनियम अधिनियमित किया।

7. विधेयक के उद्देश्य और कारणों का कथन, जिनके परिणामस्वरूप अधिनियम अधिनियमित किया गया था, इस प्रकार है :–

"उच्चतम न्यायालय ने, मोहम्मद अहमद खान **बनाम** शाह बानो बेगम और अन्य (ए. आई. आर. 1985 एस. सी. 945) में यह अभिनिर्धारित किया है कि यद्यपि मुस्लिम विधि विवाह-विच्छिन्न पत्नी के लिए भरण-पोषण का उपबंध करने के पति के दायित्व को इद्दत की अवधि तक सीमित करती है तो भी यह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 द्वारा परिकल्पित परिस्थिति को अनुध्यात या प्रोत्साहित नहीं करती है। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि मुस्लिम विधि के उपरोक्त सिद्धान्त का ऐसे मामलों पर विस्तार करना गलत और अन्यायपूर्ण होगा जिसमें विच्छिन्न-विवाह पत्नी अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है। इसलिए न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यदि विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो पति का दायित्व इद्दत की अवधि के अवसान पर समाप्त हो जाएगा, किन्तु यदि वह इद्दत की अवधि के पश्चात् अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का आश्रय लेने की हकदार है।

2. इस विनिश्चय के कारण विवाह-विच्छिन्न पत्नी के भरण-पोषण के संदाय के लिए मुस्लिम पति की बाध्यता के बारे में कुछ विवाद उत्पन्न हो गया है। इसलिए ऐसे अधिकारों को जिनकी कोई मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री विवाह-विच्छेद के समय हकदार है, विनिर्दिष्ट करने और उसके हितों का संरक्षण करने के लिए, इस अवसर का लाभ उठाया जा रहा है। तद्नुसार विधेयक में अन्य बातों के साथ निम्नलिखित के लिए उपबंध किया गया है, अर्थात् :–

(क) कोई मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री इद्दत की अवधि में अपने पूर्व पति द्वारा युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध और भरण-पोषण की हकदार होगी और उस दशा में जब वह अपने विवाह-विच्छेद के पूर्व या उसके पश्चात् उससे जन्मी संतान का भरण-पोषण करती है, ऐसे युक्तियुक्त उपबंध और भरण-पोषण का विस्तार संतान के जन्म की तारीखों से दो वर्ष की अवधि तक होगा। वह मेहर या डावर और अपने नातेदारों, मित्रों, पति द्वारा और पति के नातेदारों द्वारा उसे दी गई सभी संपत्ति की भी हकदार होगी। यदि उपरोक्त फायदे उसको विवाह-विच्छेद के समय नहीं दिए जाते हैं तो वह ऐसे भरण-पोषण, मेहर या डावर के संदाय या संपत्ति के परिदान का उपबंध करने के लिए उसके पूर्व पति को निदेश देने वाले आदेश के लिए मजिस्ट्रेट को आवेदन करने की हकदार होगी;

(ख) जहां कोई मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री इद्दत की अवधि के पश्चात् अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है वहां मजिस्ट्रेट उसके ऐसे नातेदार द्वारा जो उसकी मृत्यु पर मुस्लिम विधि के अनुसार उसकी सम्पत्ति को विरासत में पाने के हकदार होंगे, ऐसे अनुपातों में जिनमें वे उसकी संपत्ति विरासत में पाएंगे, भरण-पोषण के संदाय के लिए आदेश करने के लिए सशक्त है। यदि ऐसे नातेदारों में से कोई एक अपने अंश का इस आधार पर कि उसके पास संदाय करने के साधन नहीं हैं, संदाय करने में असमर्थ हैं तो मजिस्ट्रेट ऐसे अन्य नातेदारों को जिनके पास पर्याप्त साधन हैं, ऐसे नातेदारों के अंशों का भी संदाय करने के लिए निदेश देगा। किन्तु जहां किसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री का कोई नातेदार नहीं है, या उनमें से किसी के एक के पास भरण-पोषण का संदाय करने के पर्याप्त साधन नहीं हैं या ऐसे अन्य नातेदारों के पास भी, जिन्हें व्यतिक्रम करने वाले नातेदारों के अंशों का संदाय करने के लिए साधन नहीं हैं वहां मजिस्ट्रेट, राज्य

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 543 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556 .

विधि के प्रतिकूल भरण-पोषण के आधिकार को सृजित नहीं करती। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि **शाह बानो**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि कोई स्त्री विवाह-विच्छिन्न पति से इद्दत की अवधि के पश्चात् भी भरण-पोषण पाने की हकदार है और संसद ने भी इस विनिश्चय में अभिव्यक्त मत पर विचार किया है। उक्त विनिश्चय में अभिव्यक्त मत के परिणामस्वरूप वर्तमान अधिनियम अधिनियमित किया गया और इसलिए धारा 3(1)(क) स्वीय विधि से विसंगत नहीं है।

12. अखिल भारतीय मुस्लिम स्वीय विधि बोर्ड की ओर से उपस्थित विद्वान ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री वाई. एच. मुछाला ने यह निवेदन किया कि अधिनियम का मुख्य उद्देश्य **शाह बानो**[1] वाले मामले को निष्प्रभावी बनाना है। उन्होंने यह निवेदन किया कि इस न्यायालय ने धार्मिक मतों के संबंध में अनभिज्ञ भाषा का निर्वचन करने में जोखिम का कार्य किया है और ऐसी प्रक्रिया **आगा मुहम्मद जाफर बिन्दानीम** बनाम **कुलसूम बीबी और अन्य**[2] वाले मामले में अभिव्यक्त मत को देखते हुए जो कि विशेषतया पवित्र कुरान के अध्याय II की सुरह 241 और 242 के संबंध में अभिव्यक्त किया गया है, सुरक्षित नहीं है। उन्होंने यह निवेदन किया कि अधिनियम की धारा 3(1)(क) के निर्वचन में 'उपबंध' और 'भरण-पोषण' पद स्पष्टतया एक ही हैं न कि भिन्न जैसा कि कुछ उच्च न्यायालयों द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है। उन्होंने यह भी दलील दी कि अधिनियम का उद्देश्य पति के लिए शास्तिक नहीं है बल्कि यह आवारगी (गरीबी) दूर करने के लिए है और इस संदर्भ अधिनियम की धारा 4 ऐसी किसी स्थिति का समाधान करने के लिए पूर्णतया पर्याप्त है और उन्होंने विभिन्न निर्वचनों तथा मुस्लिमों को यथा लागू धार्मिक विचारधाराओं का निर्देश करने के पश्चात् यह निवेदन किया कि मुस्लिम समाज के सामाजिक लोकाचार किसी मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न पत्नी को उपचार देने के लिए विस्तृत जाल फैलाते हैं और वे पूर्ण रूप से पति पर निर्भर नहीं हैं। उन्होंने 1957 में लाहौर से प्रकाशित सर सय्यद अहमद खां और बशीर अहमद कृत 'वर्क्स आफ़ रिलीजियस थाट्स' के पृष्ठ 735 का निर्देश किया है। उन्होंने सूरह 241 में उल्लेखित 'दान' के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए पवित्र कुरान के अंग्रेजी अनुवाद का भी निर्देश किया है। निष्कर्ष स्वरूप उन्होंने यह निवेदन किया कि अधिनियमिती के आधार पर किया गया निर्वचन मुस्लिम स्वीय विधि के अनुसार होना चाहिए और मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न पत्नी की गरीबी की स्थिति से संबंधित होना चाहिए भले ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन उपबंध उपचार से इनकार किया गया हो और ऐसी कोई प्रक्रिया आवारगी को बढ़ावा नहीं देगी क्योंकि अधिनियम में इस संबंध में उपबंध किए गए हैं। इस न्यायालय को मुस्लिमों के सामाजिक लोकाचारों को ध्यान में रखना चाहिए जो भिन्न हैं और अधिनियमिती विधि और न्याय के अनुसार है।

13. प्रत्यर्थियों की ओर से यह भी दलील दी गई कि संसद ने आक्षेपित अधिनियम मुस्लिमों की स्वीय विधि का सम्मान करते हुए अधिनियमित किया है और यह बात स्वतः विभेद करने के लिए एक वैध आधार है; किसी समुदाय की किसी पृथक् विधि को जो ऐसे समुदाय की स्वीय विधि के आधार पर लागू की गई हो, विभेदकारी नहीं माना जा सकता; स्वीय विधि अब विधायी अधिनियमिती द्वारा कायम कर दी गई है और अधिनियम के पीछे संपूर्ण नीति भरण-पोषण का कोई अधिकार प्रदत्त नहीं करती जो स्वीय विधि से संबंधित नहीं है; अधिनियम का उद्देश्य स्वतः स्वीय विधि का परिरक्षण करना था और उसे हानि से बचाना था; अधिनियम का उद्देश्य आवारगी (गरीबी) को निवारित करना है न कि मुस्लिम स्त्री को अकिंचनता की ओर अग्रसर करना और इसी प्रकार न ही पति को शास्तिक करना; आक्षेपित अधिनियम मुस्लिम समुदाय की स्वीय विधि को ध्यान में रखते हुए सभी मुद्दों का समाधान करता है और यह तथ्य कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के फायदे मुस्लिम स्त्रियों को नहीं दिए गए हैं, आवश्यक रूप से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि मुस्लिम स्त्रियों को आवारगी और अकिंचनता से संरक्षित रखने के लिए कोई उपबंध नहीं है; इसलिए अधिनियम अविधिमान्य या असंवैधानिक नहीं है।

---

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 543 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556.

[2] 24 आई. ए. 196.

14. अखिल भारतीय स्वीय विधि बोर्ड की ओर से कुछ ऐसी अन्य दलीलें भी दी गई हैं जो ऐसी दलीलों के समान हैं जो अन्य प्राधिकारियों द्वारा दी गई हैं और उन्होंने यह निवेदन किया है कि इस न्यायालय द्वारा **शाह बानो**[1] वाले मामले में अरबी के 'मता' शब्द के संबंध में किया गया निर्वचन सही नहीं है और यह निवेदन किया कि भरण-पोषण जिसमें इद्दत अवधि के दौरान आवास के लिए उपबंध (इंतजाम) सम्मिलित है, पति का दायित्व है किन्तु ऐसे उपबंध का निर्वचन धार्मिक मतों के अनुरूप किया जाना चाहिए और इस प्रकार निर्वचन करने पर इस पद में केवल इद्दत की अवधि के दौरान और अधिनियम की धारा 3(1) (क) के अधीन विस्तारित अवधि के दौरान किसी मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न पत्नी का आवास का अधिकार भी सम्मिलित है और इस प्रकार उन्होंने अन्यों की ओर से दी गई विभिन्न दलीलों को दोहराया है और उन्होंने विभिन्न पाठ्य-पुस्तकों में अभिव्यक्त विभिन्न मतों का भी निर्देश किया है। ये पाठ्य-पुस्तकें इस प्रकार हैं :–

"(1) मौलान अबुल कलाम आजाद कृत तरजुमन अल-कुरान जिसका डॉ. सय्यद अब्दुल लतीफ द्वारा अंग्रेजी में अनुवाद किया गया;

(2) शाह वली उल्लाह दहलवी कृत कुरान का फारसी अनुवाद;

(3) कुरान (अरबी) पर आधारित अल-मनर कमेन्ट्री;

(4) इबने हजर अस्कुलानी [भाग-2] कृत अल-इसाबा; शमशुद्दीन मुहम्मद बिन अहमद बिन उस्मान अज-जहबी कृत सियार आलम-इन-नुबला;

(5) डॉ. मुस्तफा असाबी कृत अल-मरातु बईन अल-फिक़ाह वा अल-कनून;

(6) अबु अब्दुल्ला मुहमम्द बिन अहमद अल-अंसारी अल-कुरतूबी कृत अल-जमील अहकामइल अल-कुरान;

(7) बैधवी (अरबी) कृत कमेन्ट्री आन दि कुरान;

(8) इस्माईल हक्की आफंदी कृत रूह-उल-बयान (अरबी);

(9) इबने हज्म (अरबी) कृत अल मोहाला;

(10) मुहम्मद अबु जुहरा दारुल फिकरूल अरबी कृत अल-अहवालुस शख्सिया (दि पसर्नल ला)।

15. उपर्युक्त उल्लिखित पाठ्य-पुस्तकों के आधार पर यह दलील दी गई है कि **शाह बानो**[1] वाले मामले में 'मता' पद के बारे में अभिव्यक्त मत सही नहीं है और अधिनियमिती का संपूर्ण उद्देश्य **शाह बानो**[1] वाले मामले के प्रभाव को अकृत करना है जिससे कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंध के प्रवर्तन को विवर्जित किया जा सके तथापि इसके द्वारा स्वीय विधि को मान्यता दी गई है जैसा कि अधिनियम की धारा 3 और 4 में कहा गया है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि उपबंधों का निर्वचन मुस्लिम सामाजिक लोकाचारों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए और इस संबंध में स्वीय विधि से टकराव नहीं होना चाहिए।

16. इस्लामी शरियत बोर्ड की ओर से यह निवेदन किया गया है कि श्री एम. असद और डॉ. मुस्तफा अज सबाई के सिवाए किसी भी लेखक ने इस मत का समर्थन नहीं किया है कि पवित्र कुरान के अध्याय 2 की आयत 241 पूर्ववर्ती पति को इद्दत अवधि के बाद मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न पत्नी को भरण-पोषण का संदाय करने के लिए बाध्य करती है। यह निवेदन किया गया है कि श्री असद के अनुवाद और विवेचना (कमेन्ट्री) को अप्रमाणित और अविश्वसनीय माना गया है और केवल इस्लामी विश्व संघ द्वारा मान्यता दी गई है। यह निवेदन किया गया है कि डॉ. मुस्तफा अज सबाई अरबी के एक सुविख्यात लेखक हैं किन्तु उनका क्षेत्र इतिहास और साहित्य है न कि मुस्लिम

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 543 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556.

विधि। यह भी निवेदन किया गया है कि वे मुस्लिम विधि के निबंधनों में धर्मविज्ञानी हैं न कि विधिवेत्ता। यह दलील दी गई है कि इस न्यायालय ने अध्याय 2 की आयत 241 का गलत रूप से अवलंब लिया है और इस संबंध में डिक्री अध्याय 2 की आयत 236 के लिए निर्दिष्ट की गई है जो 'मता' को ऐसी विवाह-विच्छिन्न पत्नियों को संदाय करने के लिए अनिवार्य बनाता है जिनके साथ विवाह-विच्छेद से पूर्व सहवास नहीं किया गया हो और जिनका मेहर न मांगा गया हो । यह निवेदन किया गया है कि ऐसी विवाह-विच्छिन्न पत्नियां इद्दत अवधि पूरी नहीं करतीं और इसलिए किसी भरण-पोषण के हकदार नहीं होतीं। इस प्रकार 'मता' के लिए बाध्यता अधिरोपित की गई है जो कि एक बार किया जाने वाला संव्यवहार है और जो पूर्व पति की हैसियत से संबंधित है। आक्षेपित अधिनियम इस प्रकार के मामलों पर लागू नहीं होता। कुछ पाठ्य-पुस्तकों के आधार पर यह दलील दी गई है कि 'मता' शब्द जो मुस्लिम विधि की विभिन्न संस्थाओं के अनुसार ऐसी स्त्री के साथ सहवास से पूर्व किसी विवाह विच्छेद के विशिष्ट मामले में ही अबाध्यकारी है जिसका मेहर नहीं मांगा गया है और यह पद इद्दत अवधि पूरी करने के लिए या बच्चों को दूध पिलाने के लिए भरण-पोषण के अबाध्यकारी अधिकारों के संबंध में उपबंध करता है। तत्पश्चात् इस्लामी शरियत बोर्ड की ओर से इस संबंध में कुछ दलीलें दी गईं कि विभिन्न लेखकों की ओर से अभिव्यक्त मत क्यों न स्वीकार किए जाएं।

17. राष्ट्रीय महिला आयोग की ओर से उपस्थित विद्वान ज्येष्ठ काउंसेल डॉ. ए. एम. सिघंवी ने यह निवेदन किया कि गुजरात, मुम्बई, केरल उच्च न्यायालयों के विनिश्चयों और आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के अल्पमत विनिश्चय द्वारा पेश किए गए निर्वचन को हमारे द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए। उन्होंने अधिनियम की संवैधानिक विधिमान्यता के संबंध में यह निवेदन किया कि यदि अधिनियम की धारा का निर्वचन जैसा कि इस निर्णय के पश्चातवर्ती भाग में कहा गया है, स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है तब इसका परिणाम यह होगा कि कोई मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न पत्नी जहां तक उसके पूर्व पति का संबंध है, इद्दत अवधि के पश्चात् अपनी जीविका के प्रयोजन के लिए स्थाई रूप से उपचाररहित बन जाएगी। ऐसा अनुतोष न तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन उपलब्ध है और न ही इसे अधिनियम की धारा 4 में किए गए उपबंध द्वारा समुचित रूप से प्रतिकारित किया गया है। उन्होंने यह दलील दी कि अधिनियम की धारा 4 के अधीन उपबंधित उपचार भ्रामक है क्योंकि प्रथमतः वह ऐसे पक्षकारों से भरण-पोषण प्राप्त नहीं कर सकती जो न केवल वैवाहिक नातेदारी के लिए अपरिचित हैं बल्कि जो विवाह विच्छेद से संबंधित हैं; द्वितीयतः वक्फ बोर्डों के पास प्रायिक रूप से ऐसी अकिंचन स्त्री की सहायता के लिए साधन नहीं होंगे क्योंकि उनके पास स्वयं ही नियमित निधियों की कमी है और तृतीयतः अकिंचन स्त्री के मूल वसीयतदार या तो युवक होंगे या इतने वृद्ध होंगे जो अपेक्षित सहायता करने योग्य नहीं होंगे। इसलिए मामले का वास्तविक पहलू पर विचार किया जाएगा और यह उपबंध संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 की मूल धारणा को विनिश्चित करेगा और इस प्रकार जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार से इनकार इस तथ्य द्वारा बढ़ेगा कि ये केवल स्त्रियों के एक वर्ग के विरुद्ध दमनात्मक, असमानतापूर्ण और अयुक्तियुक्त कार्रवाई का प्रवर्तन करेगा। चूंकि अधिनियम की धारा 5, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 द्वारा यथा उपबंधित उपचार की उपलब्धता और प्रवर्तन को मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न पत्नियों के पति की तरंग, सनक, पसंद और विकल्प पर निर्भर बनाती है जिसके द्वारा प्रत्यक्षतया इद्दत से पूर्व की अवधि को धारा 3 की व्याप्ति से बाहर रखा जाना ईप्सित है इसलिए यह निवेदन किया गया है कि इस उपबंध को असंवैधानिक अभिनिर्धारित किया जाए।

18. इस न्यायालय ने शाह बानो[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि मुस्लिम स्वीय विधि पति के दायित्व को अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को इद्दत की अवधि के लिए भरण-पोषण प्रदान करने तक परिसीमित करती है तथापि यह उस स्थिति को अनुध्यात नहीं करती जो 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 द्वारा परिकल्पित है। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह गलत या अन्यायपूर्ण नहीं होगा यदि मुस्लिम विधि के उपर्युक्त सिद्धांत को ऐसे मामलों तक विस्तारित किया जाए जिनमें कोई विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपना भरण-पोषण

---

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 843 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556.

करने में असमर्थ है और इसलिए न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि यदि विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपना भरण-पोषण करने में समर्थ है तो पति का दायित्व इद्दत की अवधि के पर्यावसान तक सीमित रहता है किन्तु यदि वह इद्दत की अवधि के पश्चात् अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है तो वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का आश्रय लेने की हकदार हैं। चूंकि यह विनिश्चय मुस्लिम पति पर अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को भरण-पोषण का संदाय करने के लिए दायित्व अधिरोपित करता है इसलिए संसद ने किसी मुस्लिम स्त्री के अधिकार को विवाह-विच्छेद के समय भरण-पोषण संदत्त करने के लिए और उसके अधिकारों के संरक्षण के लिए उपबंध किया।

19. विद्वान काउंसेल ने इन मामलों में उद्भूत कतिपय आकस्मिक मुद्दे भी उठाए हैं जो निम्न प्रकार हैं :–

1. क्या ऐसा पति जिसने अधिनियमिती से पूर्व पारित आदेशों का अनुपालन नहीं किया था और उसके विरुद्ध संदायों की बकाया थी, अधिनियम के आधार पर अपने दायित्व से बच सकता है या दूसरे शब्दों में क्या अधिनियम भूतलक्षी प्रभाव से लागू है?

2. क्या कुटुम्ब न्यायालयों को अधिनियम के अधीन विवाद्यकों का विनिश्चय करने की अधिकारिता है?

3. अधिनियम के अधीन वक्फ बोर्ड किस सीमा तक दायित्वाधीन है?

20. पक्षकारों के विद्वान काउंसेल ने विस्तृत विवादों के संबंध में विस्तार से दलीलें दी हैं। चूंकि यह न्यायपीठ केवल अधिनियम के उपबंधों की संवैधानिक विधिमान्यता पर विचार कर रही है इसलिए हम केवल उन प्रश्नों पर ही विचार करेंगे जो कि इस पहलू से संबंधित है। हम केवल अधिनियम की संवैधानिक विधिमान्यता के प्रश्न पर ही विचार करेंगे और मामलों को उस समय के लिए छोड़ देंगे जब ऐसे विवाद्यक या तो अपील में या विशेष इजाजत याचिकाओं में अथवा रिट याचिकाओं में इस न्यायालय की संबंधित न्यायपीठों के समक्ष विचार करने के लिए उठाए जाएंगे ।

21. हमें उन उपबंधों का निर्वचन करने के लिए जो वैवाहिक नातेदारी से संबंधित हैं, हमारे समाज में प्रचलित सामाजिक शर्तों पर विचार करना होगा । हमारे समाज में, चाहे वह बहुसंख्यक समूह से संबंधित हो या अल्पसंख्यक समूह से, जो स्पष्ट है वह यह है कि एक पुरुष और एक स्त्री के बीच आर्थिक साधन संपन्नता के मामले में पूर्ण असमानता विद्यमान है। हमारा समाज आर्थिक और सामाजिक दोनों ही रूप से पुरुष प्रधान (शासित) समाज है और स्त्रियों को निरपवाद रूप से समाज के ऐसे वर्ग को जिससे कि वह (स्त्री) संबंधित है, ध्यान में रखे बिना एक आश्रयी भूमिका सौंपी गई है। किसी स्त्री को उसका विवाह होते ही प्रायः अपने सभी अन्य पेशे त्यागने पड़ते हैं भले ही वह अत्यधिक शिक्षित हो और वह अपने कुटुम्ब के कल्याण के लिए अपने को पूर्णतया तल्लीन कर लेती है, विशेषतया वह अपनी संवेदनाओं, भावनाओं, विवेक और शरीर को अपने पति के साथ बांटती है और विवाह में उसका विनिधान उसका संपूर्ण जीवन है जो उसके द्वारा अपने व्यक्तित्व का सांस्कारिक त्याग है और यदि इसे धन के रूप में मापा जाए तो यह एक बहुत बड़ा त्याग है । यदि किसी भी प्रकार से इस प्रकृति की नातेदारी टूट जाए तो इस बात के लिए कोई उत्तर नहीं हो सकता कि क्या हम उसके संवेदनात्मक भंग या विनिधान संबंधी हानि को प्रतिकारित कर सकते हैं। यह कहना केवल सांत्वना देना होगा कि ऐसी किसी स्त्री को उसकी आजीविका के संबंध में धन से प्रतिकारित किया जाना चाहिए और ऐसे कोई अनुतोष जिसमें लिंग और सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए मूल मानव अधिकार सम्मिलित हैं, सार्वभौम रूप से सभी धर्मों से संबंधित व्यक्तियों द्वारा स्वीकार किए गए हैं और यह महसूस करना कठिन है कि मुस्लिम विधि वैवाहिक जीवन से असंबंधित ऐसे व्यक्तियों को यथा ऐसे उत्तराधिकारी को जिन्हें ऐसी स्त्री की संपत्ति विरासत में प्राप्त हो सकती है तथा वक्फ बोर्डों को भिन्न प्रकार का दायित्व प्रदान करने के लिए अभिप्रेत है। हमें ऐसा कोई विचार सामाजिक तथ्यों का एक प्रकार का तोड़-फोड़ प्रतीत होता है। मूल मानव अधिकारों, संस्कृति, गरिमा और जीवन की मर्यादा के क्षेत्रों से संबंधित सार्वभौम महत्व की ऐसी सामाजिक समस्याओं के हल को और सामाजिक न्याय की पृष्ठभूमि में आवश्यकता संबंधी अधिदेशों को निरपवाद रूप से धर्म या धार्मिक विश्वास या विश्वासों या राष्ट्रीय, साम्प्रदायिक, जातीय अथवा साम्प्रदायिक प्रतिबंधों से भिन्न बातों के आधार पर

विनिश्चित किए जाने के लिए छोड़ देना चाहिए। इस पहलू को ध्यान में रखते हुए हम प्रश्नगत अधिनियम के उपबंधों का निर्वचन करेंगे।

22. यहां अधिनियम की व्याप्ति को समझने के लिए इसके उपबंधों का विश्लेषण करना आवश्यक होगा। अधिनियम की उद्देशिका में यह उल्लिखित है कि यह अधिनियम उन मुस्लिम स्त्रियों के अधिकारों का संरक्षण करने के लिए, जिनका उनके पति द्वारा विवाह-विच्छेद हो गया है या जिन्होंने अपने पति से विवाह-विच्छेद प्राप्त कर लिया हो और उससे संबद्ध या उसके आनुषांगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियमित किया गया है। 'विवाह-विच्छिन्न स्त्री' को अधिनियम की धारा 2(क) के अधीन परिभाषित किया गया है जिससे 'विवाह-विच्छिन्न स्त्री' से ऐसी मुस्लिम स्त्री अभिप्रेत है जिसका मुस्लिम विधि के अनुसार विवाह हुआ था और जिसका, मुस्लिम विधि के अनुसार, उसके पति द्वारा विवाह-विच्छेद किया गया है, या जिसने अपने पति से विवाह-विच्छेद प्राप्त कर लिया हो; 'इद्दत की अवधि' अधिनियम की धारा 2(ख) के अधीन परिभाषित है जिससे किसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री की दशा में निम्न अभिप्रेत है :–

(i) यदि उसका ऋतुस्राव होता है, तो विवाह-विच्छेद की तारीख के पश्चात् तीन ऋतुस्राव;

(ii) यदि उसका ऋतुस्राव नहीं होता है तो उसके विवाह-विच्छेद के पश्चात् तीन चन्द्रमास; और

(iii) यदि वह अपने विवाह-विच्छेद के समय गर्भवती है तो विवाह-विच्छेद और उसके संतान के जन्म या उसके गर्भ के समापन के बीच की अवधि, इनमें जो भी पूर्वतर हो।

23. अधिनियम की धारा 3 और 4 जो कि मुख्य धाराएं हैं, हमारे समक्ष आक्षेपित की गई हैं। धारा 3 एक सर्वोपरि खंड है जो अन्य सभी विधियों पर अध्यारोही है और यह धारा यह उपबंध करती है कि कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री निम्नलिखित की हकदार होगी, अर्थात् :–

(क) कोई युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध और भरण-पोषण जो उसके पूर्व पति द्वारा इद्दत की अवधि में उसके लिए किया जाना है और उसे संदत्त किया जाना है,

(ख) जहां वह अपने विवाह-विच्छेद के पूर्व या उसके पश्चात् उससे जन्मी संतान का स्वयं भरण-पोषण करती है वहां, कोई युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध और भरण-पोषण जो ऐसी संतान की जन्म की संबंधित तारीखों से 2 वर्ष की अवधि के लिए उसके पूर्व पति द्वारा किया जाना चाहिए और संदत्त किया जाना चाहिए;

(ग) मुस्लिम विधि के अनुसार उसके विवाह के समय या उसके पश्चात् किसी समय उसे संदत्त किए जाने के लिए करार पाई गई मेहर या डावर की राशि के बराबर रकम;

(घ) उसके नातेदारों या मित्रों या पति द्वारा अथवा पति के किसी नातेदार या उसके मित्रों द्वारा विवाह के पूर्व या विवाह के समय अथवा उसके विवाह के पश्चात् दी गई सभी संपत्ति।

जहां किसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री के विवाह-विच्छेद पर कोई युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध नहीं किया गया है और भरण-पोषण अथवा शोध्य मेहर या डावर की रकम उसको संदत्त नहीं की गई है अथवा उपधारा (1) के खंड (घ) में निर्दिष्ट संपत्तियों का परिदान नहीं किया गया है वहां वह या उसके द्वारा सम्यक् रूप से प्राधिकृत कोई व्यक्ति उसकी ओर से, यथास्थिति, ऐसे उपबंध और भरण-पोषण, मेहर या डावर के संदाय अथवा संपत्ति के परिदान के आदेश के लिए किसी मजिस्ट्रेट को आवेदन कर सकेगा।

अधिनियम की धारा 3 के शेष उपबंध जो प्रक्रियात्मक प्रकृति के हैं, अधिक सुसंगत नहीं हैं।

24. अधिनियम की धारा 4 में यह उपबंध है कि इस अधिनियम के पूर्वगामी उपबंधों या तत्समय प्रवृत्त या किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी जहां मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाता है कि विवाह-विच्छिन्न स्त्री

ने पुनर्विवाह नहीं किया है और वह इद्दत की अवधि के पश्चात् अपना भरण-पोषण करने में समर्थ नहीं है वहां वह उसके ऐसे नातेदारों को, जो उसकी मृत्यु पर मुस्लिम विधि के अनुसार उसकी संपत्ति के उत्तराधिकारी होने के हकदार होंगे, विवाह-विच्छिन्न स्त्री की आवश्यकताओं, उसके विवाह के दौरान उसके द्वारा उपभोग किए गए जीवन-स्तर और ऐसी नातेदारों के साधन को ध्यान में रखते हुए, यह निदेश देते हुए आदेश कर सकेगा कि वे ऐसे युक्तियुक्त और ऋजु भरण-पोषण का, जो वह ठीक और उचित अवधारित करे, उसको संदाय करें और ऐसा भरण-पोषण ऐसे नातेदारों द्वारा उसी अनुपात में, जिसमें वे उसकी संपत्ति के उत्तराधिकारी होंगे और ऐसी अवधियों पर संदत्त किया जाएगा जैसी वह अपने आदेश में विनिर्दिष्ट करे। यदि कोई नातेदार आदिष्ट भरण-पोषण का संदाय करने के लिए आवश्यक साधन नहीं रखता है तो मजिस्ट्रेट यह आदेश कर सकता है कि उसके द्वारा आदिष्ट भरण-पोषण में ऐसे नातेदारों का अंश ऐसे अन्य नातेदारों द्वारा जिनके बारे में मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत हो कि उनके पास उसका संदाय करने के साधन हैं, ऐसे अनुपात में संदत्त किया जाए जैसा मजिस्ट्रेट आदेश करना ठीक समझे। जहां कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है और उपधारा (1) में यथा विनिर्णीत उसके कोई नातेदार नहीं हैं या ऐसे नातेदारों अथवा उनमें से किसी के पास मजिस्ट्रेट द्वारा आदिष्ट भरण-पोषण का संदाय करने के पर्याप्त साधन नहीं हैं या अन्य नातेदारों के पास उन नातेदारों के अंशों का संदाय करने के साधन नहीं हैं जिनके अंशों का ऐसे अन्य नातेदारों द्वारा संदाय किए जाने के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा उपधारा (1) के दूसरे परन्तुक के अधीन आदेश किया गया है वहां मजिस्ट्रेट राज्य वक्फ बोर्ड को जो उस क्षेत्र में जिसमें वह स्त्री वास करती है, कार्य कर रहा हो, यथास्थिति ऐसे भरण-पोषण का संदाय, जो उपधारा (1) के अधीन उसके द्वारा अवधारित किया जाए या ऐसे नातेदारों के, जो संदाय करने में असमर्थ हैं, अंशों का संदाय ऐसी अवधियों पर करने का निदेश दे सकेगा जो वह आदेश में विनिर्दिष्ट करे। तथापि यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा कि अधिनियम की धारा 4 केवल 'भरण-पोषण' के संदाय के संबंध में निर्देश करती है और यह अधिनियम की धारा 3(1)(क) में निर्दिष्ट पति द्वारा दिए जाने वाले 'उपबंध' के संबध में कोई निर्देश नहीं करती।

25. अधिनियम की धारा 5 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 से 128 के उपबंधों के अन्तर्गत आने वाले विकल्प के लिए उपबंध करती है। इसमें यह अधिकथित किया गया है कि – यदि धारा 3 की उपधारा (2) के अधीन आवेदन की पहली सुनवाई की तारीख को विवाह-विच्छिन्न स्त्री और उसके पूर्व पति शपथपत्र या किसी अन्य लिखित घोषणा द्वारा ऐसे प्रारूप में, जो विहित किया जाए, या तो संयुक्त रूप से या पृथक्तः, यह घोषित करते हैं कि वे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 से धारा 128 तक के उपबंधों द्वारा शासित होना चाहते हैं और वे आवेदन की सुनवाई करने वाले न्यायालय में ऐसा शपथपत्र या घोषणा फाइल करते हैं, तो मजिस्ट्रेट ऐसे आवेदन को तद्नुसार निपटाएगा।

26. अधिनियम के परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि अधिनियम मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के परिधि के बाहर रखकर सम्यक् बाध्यताओं को संहिताबद्ध और विनियमित करता है क्योंकि 'विवाह-विच्छिन्न स्त्री' को ऐसी मुस्लिम स्त्री के रूप में परिभाषित किया गया है जिसका मुस्लिम विधि के अनुसार उसके पति द्वारा विवाह-विच्छेद किया गया है या जिसने अपने पति से विवाह-विच्छेद प्राप्त कर लिया है। किन्तु अधिनियम ऐसी किसी मुस्लिम स्त्री को लागू नहीं होता जिसका विवाह या तो भारतीय विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के अधीन हुआ हो अथवा ऐसी कोई मुस्लिम स्त्री जिसका विवाह भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1969 या भारतीय विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के अधीन विघटित हुआ हो। अधिनियम अभित्यक्त पृथक्तः मुस्लिम पत्नियों को लागू नहीं होता। अधिनियम के अधीन भरण-पोषण पति द्वारा इद्दत की अवधि के दौरान संदत्त किया जाएगा और इस बाध्यता को इद्दत की अवधि के पश्चात् तक विस्तारित नहीं किया गया है। जब एक बार इद्दत की अवधि के पर्यवसान के साथ पति के साथ नातेदारी समाप्त हो जाती है तो जिम्मेदारी विवाह-विच्छिन्न स्त्री के नातेदारों पर चली जाती है। अधिनियम में यह अवधारित करने में मुस्लिम स्वीय विधि का अनुसरण किया गया है कि किन परिस्थितियों में कौन सा नातेदार दायित्वाधीन है। यदि कोई नातेदार नहीं है अथवा कोई नातेदार

विवाह-विच्छिन्न स्त्री को संदाय करने योग्य नहीं है तो न्यायालय भरण-पोषण के संदाय के लिए राज्य वक्फ बोर्ड को आदेश कर सकता है।

27. अधिनियम की धारा 3(1) में यह उपबंध है कि कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री अपने पति से युक्तियुक्त और ऋजु भरण-पोषण पाने की हकदार होगी जो उसे इद्दत की अवधि के भीतर दिया और संदत्त किया जाएगा। धारा 3(2) के अधीन मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री उस दशा में किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन फाइल कर सकती है यदि पूर्व पति उसे युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध और भरण-पोषण या उसको देय मेहर का संदाय नहीं करता है अथवा ऐसी संपत्तियों का परिदान नहीं करता है जो उसके विवाह से पूर्व या विवाह के समय उसके नातेदारों या मित्रों या पति या उसके नातेदारों अथवा मित्रों द्वारा दी गई थीं। धारा 3(3) में वह प्रक्रिया उपबंधित की गई है जिसमें मजिस्ट्रेट पूर्व पति को विवाह-विच्छिन्न स्त्री के लिए युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध करने तथा भरण-पोषण का संदाय करने जो वह विवाह-विच्छिन्न स्त्री की आवश्यकताओं, उसके विवाह के दौरान उसके द्वारा उपभोग किए गए जीवन स्तर और उसके पूर्व पति के साधनों को दृष्टि में रखते हुए ठीक और उचित अवधारित करे, का निदेश करते हुए आदेश पारित कर सकता है। अधिनियम की धारा 3 (1)(क) के अधीन मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री के उपबंध (संभरण) और भरण-पोषण के लिए अधिकार का न्यायिक प्रवर्तन इस शर्त के अध्यधीन रखा गया है कि पति के पास पर्याप्त साधन हों जो यथार्थतः मुस्लिम विधि के सिद्धांतों के प्रतिकूल है क्योंकि इद्दत की अवधि के दौरान भरण-पोषण के संदाय का दायित्व शर्त रहित है और पति के वित्तीय साधनों द्वारा परिसीमित नहीं किया जा सकता। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिनियम का प्रयोजन मुस्लिम पति को विवाह-विच्छेद और इद्दत की अवधि के पश्चात् अपनी पूर्व पत्नी को भरण-पोषण के संदाय से बचने की उसकी स्वतंत्रता को कायम रखना है।

28. अधिनियम की उपबंधों के परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री भरण-पोषण के लिए युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध के लिए हकदार है। यह कहा गया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि संसद का यह आशय था कि विवाह-विच्छिन्न स्त्री विवाह-विच्छेद के पश्चात् अपनी जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करे और इसलिए 'उपबंध' शब्द से यह दर्शित होता है कि कतिपय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अग्रिम रूप में कुछ दिया गया है। दूसरे शब्दों में विवाह-विच्छेद के समय मुस्लिम पति से यह अपेक्षित है कि वह भावी आवश्यकताओं पर विचार करे और इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अग्रिम रूप में प्रारंभिक इंतजाम करे। युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध (संभरण) में स्त्री के आवास, भोजन, उसके वस्त्र और अन्य चीजें सम्मिलित हैं। 'भीतर' पद को 'दौरान' या 'के लिए' के रूप में पढ़ा जाना चाहिए और ऐसा इस कारण नहीं किया जा सकता क्योंकि शब्दों का उनके अर्थ के प्रतिकूल अर्थान्वयन नहीं किया जा सकता क्योंकि 'भीतर' शब्द से 'पर या पूर्व', 'परे नहीं' अभिप्रेत है और इसलिए यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि अधिनियम से यह अभिप्रेत है कि इद्दत की अवधि के पर्यवसान पर पूर्व पति, पत्नी का भरण-पोषण करने और संदाय करने के लिए आबाध्य है और यदि वह ऐसा करने में विफल रहता है तो पत्नी इसे मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन फाइल करके प्राप्त करने की हकदार है जैसा कि धारा 3 (3) में उपबंधित है किन्तु संसद ने यह कहीं भी उपबंध नहीं किया है कि युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध तथा भरण-पोषण केवल इद्दत अवधि के लिए परिसीमित है न कि इसके परे । इसे विवाह-विच्छिन्न पत्नी को सम्पूर्ण जीवन के लिए विस्तारित किया जाना चाहिए जब तक कि वह दूसरा विवाह न कर ले।

29. अधिनियम में महत्वपूर्ण धारा, धारा 3 है जो यह उपबंध करती है कि विवाह-विच्छिन्न पत्नी अपने पूर्व पति से 'भरण-पोषण', 'उपबंध' और 'मेहर' प्राप्त करने और उसके कब्जे से अपने विवाह संबंधी उपहार और डावरी प्राप्त करने की हकदार है और मजिस्ट्रेट को ऐसी धनराशियां या संपत्तियों का संदाय करने या वापस दिलाने का आदेश करने के लिए प्राधिकृत किया गया है। निष्कर्ष यह है कि विवाह-विच्छिन्न स्त्री युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध तथा भरण-पोषण पाने की हकदार होगी जो उसे उसके पूर्व पति द्वारा इद्दत की अवधि के भीतर दिया और संदत्त किया जाएगा। अधिनियम की धारा 3 की भाषा से यह उपदर्शित होना प्रतीत होता है कि पति पर दो पृथक और भिन्न दायित्व डाले गए हैं :– (1) अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को 'युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध' किया जाना; और (2)

उसके लिए 'भरण-पोषण' प्रदान किया जाना। इस धारा में न केवल ऐसे 'उपबंध' या 'भरण-पोषण' की प्रकृति या अवधि पर बल दिया गया है बल्कि ऐसे समय पर भी बल दिया गया है जिसके द्वारा ऐसे उपबंध और भरण-पोषण के संदाय के लिए इंतजाम किया जाना चाहिए अर्थात् 'इद्दत अवधि के भीतर'। यदि उपबंधों को इस प्रकार पढ़ा जाता है तो अधिनियम किसी ऐसे पुरुष को इद्दत से पूर्व की अवधि के भरण-पोषण के दायित्व से मुक्त करता है जिसने अपनी पत्नी को इन एक मुश्त धनराशियों का संदाय करके 'युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध' और 'भरण-पोषण' दोनों दायित्वों का निर्वहन पहले ही कर दिया है और इसके अतिरिक्त अधिनियम की धारा 3(1)(ग) और 3(1)(घ) के अनुसार अपनी पत्नी का मेहर और उसके डावरी का संदाय कर दिया है। प्रमिततः **शाह बानो**[1] वाले मामले में विचारार्थ प्रश्न यह उद्भूत हुआ था कि क्या पति ने अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को 'युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध' नहीं दिया था, भले ही उसने 50 वर्ष पूर्व स्वीकार की गई धनराशि संदत्त कर दी थी और इद्दत का भरण-पोषण दे दिया था और इसलिए उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन पत्नी को विनिर्दिष्ट मासिक धनराशि का संदाय करने का आदेश दिया गया था। यह उपबंध उस तारीख को संसद के समक्ष था जब उसने यह विधि अधिनियमित की थी फिर भी अधिनियम के अधीन अधिनियमित उपबंध अधिनियम की धारा 3(1)(क) के अधीन 'युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध और भरण-पोषण किया ज़ाएगा और संदत्त किया जाएगा' उपबंध किया गया और इन पदों के अन्तर्गत विभिन्न चीजें आतीं हैं। प्रथमतः, दो भिन्न क्रियाओं का प्रयोग किया गया है :– 'इद्दत की अवधि में उसके लिए किया जाना है और उसको संदत्त किया जाना है' और इससे यह स्पष्ट है कि जब भरण-पोषण संदत्त किया जाएगा तो ऋजु और युक्तियुक्त उपबंध किया जाएगा; द्वितीयतः, अधिनियम की धारा 4 में जो मजिस्ट्रेट को विवाह-विच्छिन्न स्त्री के लिए उसके विभिन्न नातेदारों के प्रति भरण-पोषण के संदाय के लिए, कोई आदेश जारी करने के लिए सशक्त करती है, 'उपबंध' शब्द का कोई निर्देश नहीं है। स्पष्टतया उसके (पत्नी के) हक में 'कोई ऋजु और युक्तियुक्त उपबंध' करने का अधिकार एक ऐसा अधिकार है जो स्त्री के पूर्व पति के विरुद्ध ही प्रवर्तनीय है और इसके अतिरिक्त उसका यह भी दायित्व है कि वह 'भरण-पोषण' का संदाय करे; तृतीयतः यद्यपि पवित्र कुरान में प्रयुक्त 'मता' शब्द का यूसुफ अली द्वारा 'भरण-पोषण के रूप में' किया गया अनुवाद गलत हो सकता है और इस न्यायालय ने **शाह बानो**[1] वाले मामले में 'उपबंध' शब्द के किए गए अन्य अनुवादों को इस पहलू पर यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया था कि यह एक ऐसा अंतर है जो बिना विभेद के है। तथ्यतः चाहे 'मता' 'भरण-पोषण' या 'उपबंध' के अन्तर्गत आता हो तो भी इस बात के लिए कोई दावा नहीं हो सकता कि **शाह बानो** वाले मामले में पति ने अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी को 'मता' के जरिए किसी प्रकार कुछ दिया था। दूसरी ओर से दी गई दलील यह है कि कोई विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री केवल एक बार या एक संव्यवहार के जरिए 'मता' के लिए हकदार है और इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि वह लगातार भरण-पोषण के संदाय के लिए हकदार है। इसके अतिरिक्त यह दलील इस मत का समर्थन करती है कि अधिनियम की धारा 3(1)(क) में 'उपबंध' शब्द में विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री के अधिकार के रूप में 'मता' सम्मिलित है जो मेहर और इद्दत अवधि के लिए भरण-पोषण से भिन्न और अतिरिक्त है और यह अधिनियम की धारा 3(3) के अधीन यथा उपबंधित 'युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध' के लिए समर्थ बनाती है और यह इस निर्देश में है कि विवाह-विच्छिन्न स्त्री की आवश्यकताएं पति के साधनों और विवाह के दौरान स्त्री द्वारा उपभोग किए गए जीवन के स्तर के निर्देश में है और इसके लिए कोई कारण नहीं है कि क्यों न ऐसे उपबंध को विवाह-विच्छिन्न स्त्री के निर्वाह व्यय के नियमित संदाय के रूप में माना जाए यद्यपि यह व्यंग्यात्मक लग सकता है कि वस्तुतः अधिनियमिति **शाह बानो**[1] वाले मामले के विनिश्चय को उलटने के लिए अधिनियमित की गई है जो वस्तुतः इसमें उल्लिखित पूर्ण तर्कयुक्तता को संहिताबद्ध करती है।

30. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के साथ इन उपबंधों की तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि धारा 125 में उपबंधित अपेक्षाएं और इसका प्रयोजन, उद्देश्य और व्याप्ति ऐसे व्यक्तियों को आदेश करके आवारगी को रोकना है

---

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 543 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556.

जो ऐसे व्यक्तियों का भरण-पोषण कर सकते हैं जो स्वयं भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं और जो भरण-पोषण के लिए सामान्यतया वैध दावे की शर्तों को पूरा करते हैं। यदि ऐसा है तो याचियों की यह दलील महत्वहीन हो जाती है कि अधिनियम के अधीन ऐसी विभिन्न स्कीमें उपबंधित की गई हैं जो समान रूप से या अधिक लाभकारी हैं और दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन उपबंधित स्कीम हमारे द्वारा किए गए निर्वचन के आधार पर उन्हें उनके अधिकार से वंचित करती है । धारा 125 का उद्देश्य और व्याप्ति उन व्यक्तियों को बाध्य करके आवारगी को रोकना है जो उन व्यक्तियों का भरण-पोषण करने की बाध्यता के अधीन हैं जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं और चूंकि यह उद्देश्य पूरा हो जाता है, इसलिए हमें याचियों की ओर से दी गई दलील को स्वीकार करना कठिन प्रतीत होता है।

31. पक्षकार इस बात से सहमत हैं कि अधिनियम के अधीन भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंध लागू होते हैं और अन्यथा भी मजिस्ट्रेट को भरण-पोषण के लिए समुचित उपबंध करने के लिए शक्ति प्रदत्त की गई है और इसलिए पूर्व में मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन जो मंजूर कर सकता था वह अब अधिनियम के अधीन भी मंजूर कर सकता है। इस स्थिति को देखते हुए अधिनियम को असांविधानिक नहीं माना जा सकता।

32. जिस तारीख को अधिनियम प्रवृत्त हुआ उस तारीख को मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को इस न्यायालय द्वारा **शाह बानो**[1] वाले मामले में घोषित विधि लागू होती थी। वर्तमान मामले में विवाह-विच्छिन्न स्त्री के अधिकारों के संबंध में मुस्लिमों की स्वीय विधि का पता लगाने के लिए आरंभिक बिन्दु **शाह बानो**[1] वाला मामला होना चाहिए न कि मूल पाठ्य-पुस्तकें या ऐसी अन्य सामग्री जिनमें से अधिकतर के अधिप्रमाणन के बारे में अलग-अलग कथन मौजूद हैं। अतः हम इनका विस्तारपूर्वक निर्देश नहीं कर रहे हैं। विनिश्चय पवित्र कुरान और अन्य समीक्षाओं तथा विभिन्न पाठ्य-पुस्तकों पर विचार करने के पश्चात् दिया गया था। जब इस न्यायालय की एक संविधान न्यायपीठ ने पवित्र कुरान के अध्याय 2 की सूरह 241-242 और अन्य सुसंगत पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री का विश्लेषण करने के पश्चात् विनिश्चय दिया तो हम यह नहीं समझते कि हमें इस स्थिति की पुनः परीक्षा करनी चाहिए और किसी दूसरे निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अनुसंधान करना चाहिए। इसमें जो कुछ कहा गया है, हम ससम्मान उसका अनुसरण करते हैं। उक्त मामले में अधिकथित सिद्धान्त पर प्रभाव डाले बिना जिस बात पर विचार किए जाने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या अधिनियम में स्वीय विधियों से विनिर्दिष्ट विचलन किया गया है जैसा कि **शाह बानो**[1] वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है। हमने सावधानीपूर्वक इसका विश्लेषण किया और हमारा यह निष्कर्ष है कि वस्तुतः और यथार्थतः अधिनियम में वही संहिताबद्ध किया गया है जो **शाह बानो**[1] वाले मामले में कहा गया था। विद्वान महा सालिसिटर ने यह दलील दी कि अधिनियम से संबंधित विधेयक में जो उद्देश्य और कारण अभिकथित किए गए हैं वे सही हैं और हमें उन्हें सही मानना चाहिए। हमने **शाह बानो**[1] वाले मामले के तथ्यों और इसमें अधिकथित विधि का विश्लेषण किया और अब हम इसका अधिनियम पर प्रभाव का पता लगाने के लिए अग्रसर होते हैं। जैसा कि हम उल्लेख कर चुके हैं कि यदि अधिनियम की भाषा पर विचार किया जाए तो इस तथ्य का कि विधान मंडल ने विधि अधिनियमित करने में कतिपय तथ्यों की अवेक्षा की है, अधिक महत्व नहीं रह जाता।

33. इस न्यायालय ने **शाह बानो**[1] वाले मामले में स्पष्ट रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में किसी विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम पत्नी को भरण-पोषण संदत्त किए जाने के लिए उपबंध करने के पीछे कारण को स्पष्ट किया और वह कारण स्पष्ट रूप से यह है कि किसी मुस्लिम स्त्री को आवारगी या अकिंचनता से बचाया जाए। उन मुस्लिम संगठनों की ओर से जिन्होंने हमारे समक्ष मध्यक्षेप किए हैं, यह दलील दी गई है कि अधिनियम के अधीन यह ईप्सा की गई है कि आवारगी या अकिंचनता से बचाया जाए किन्तु किसी भी प्रकार से दोषी पति को दंडित करके नहीं बल्कि अन्यों द्वारा भरण-पोषण के लिए उपबंध करके। यदि किसी भी कारण से हमारे द्वारा अधिनियम की धारा 3(1)(क) और धारा 4 के लिए किया गया निर्वचन स्वीकार किए जाने योग्य न हो तो भी हम इन उपबंधों के

---

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 543 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556.

जैसे वे हैं, प्रभाव की परीक्षा करेंगे अर्थात् क्या कोई मुस्लिम स्त्री एक बार तलाक की घोषणा हो जाने पर इद्दत की अवधि के पश्चात् अपने पति से भरण-पोषण पाने की हकदार नहीं होगी और क्या उसके पश्चात् भरण-पोषण केवल धारा 4 में उल्लिखित विभिन्न व्यक्तियों या वक्फ बोर्ड से ही वसूल किया ज़ा सकता है। इस न्यायालय ने **ओल्गा टेलिस और अन्य** बनाम **मुम्बई नगर निगम**[1] और **मेनका गांधी** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामलों में यह अभिनिर्धारित किया कि संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन गारंटीकृत 'प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार' की संकल्पना में 'गरिमा के साथ रहने का अधिकार' सम्मिलित है। अधिनियम में किसी मुस्लिम स्त्री को जिसे उसके पति द्वारा विवाह-विच्छिन्न कर दिया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंधों के अधीन उसके पति से भरण-पोषण के अधिकार को मंजूर किया गया है जब तक कि वह पुनर्विवाह न कर ले और यदि उसे ऐसे अधिकार से वंचित किया जाता है तो यह युक्तियुक्त, न्यायोचित और ऋजु नहीं होगा। इस प्रकार अधिनियम के ऐसे उपबंध जिनके द्वारा विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री को उसके पूर्व पति से भरण-पोषण पाने के अधिकार से वंचित किया गया हो और जिनके द्वारा पूर्व पति द्वारा केवल इद्दत की अवधि के लिए ही उसे भरण-पोषण संदत्त किए जाने का उपबंध किया गया हो और तत्पश्चात् उसके एक के बाद दूसरे नातेदारों की तलाश करने तथा अन्ततः वक्फ बोर्ड का दरवाजा खटखटाने के लिए उपबंध किया गया हो, युक्तियुक्त और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के उपबंधों का ऋजु विकल्प प्रतीत नहीं होता। यह नहीं कहा जा सकता कि दंड प्रक्रिया संहिता के लाभकारी उपबंधों के अधीन विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्रियों का अपने पूर्व पतियों से भरण-पोषण के अधिकार का जो अन्यथा भारत में अन्य भी स्त्रियों को उपलब्ध है, अपवंचन युक्तियुक्त, सही, न्यायोचित और ऋजु विधि द्वारा प्रभावित होता है और यदि ये उपबंध दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 9 के उपबंधों की अपेक्षा कम लाभकारी हैं तो किसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री के साथ स्पष्टतया अयुक्तियुक्त रूप से विभेद किया गया है और उसे संहिता के अधीन यथा उल्लिखित साधारण विधि के उन उपबंधों का संरक्षण मिलना चाहिए जो हिन्दू, जैन, पारसी या ईसाई स्त्रियों को या किसी अन्य समुदाय से संबंधित स्त्रियों को उपलब्ध हैं। अतः उपबंध प्रथमदृष्ट्या संविधान के अनुच्छेद 14 का जो अन्यथा समान परिस्थितियों वाले सभी व्यक्तियों के लिए समानता और विधि के समान संरक्षण की आज्ञा देता है, अतिक्रमणकारी प्रतीत होते हैं और यह संविधान के अनुच्छेद 15 के जो धर्म के आधार पर विभेद को प्रतिषिद्ध करता है, भी अतिक्रमण में है क्योंकि अधिनियम स्पष्ट रूप से मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री को उनके मुस्लिम धर्म से संबंधित होने के आधार पर ही लागू होता है। यह सुस्थापित है कि अर्थान्वयन के नियम के आधार पर ही यह कानून अधिकारातीत या 'असांविधानिक' बन जाएगा और इसलिए शून्य होगा जबकि दूसरे अर्थान्वयन के आधार पर जो अनुज्ञेय है, कानून प्रभावी और प्रवर्तनशील रहेगा और न्यायालय इस आधार पर पश्चात्वर्ती को अधिमान देगा कि विधानमंडल का असांविधानिक विधियां अधिनियमित करने का आशय नहीं हो सकता। हमारा यह मत है कि पश्चात्वर्ती निर्वचन स्वीकार किया जाना चाहिए और इसलिए हमारे द्वारा किए गए निर्वचन का परिणाम यह निकलता है कि अधिनियम की विधिमान्यता की पुष्टि की जाए। यह सुस्थापित है कि जहां किसी अधिनियमिती के समुचित परिशीलन द्वारा अधिनियम की विधिमान्यता की पुष्टि की जा सकती हो वहां न्यायालयों द्वारा ऐसा निर्वचन ही स्वीकार्य होता है न कि अन्य कोई निर्वचन।

34. मुस्लिम संगठनों की ओर से उपस्थित विद्वान काउंसेल ने उन पाठ्य-पुस्तकों के कतिपय खंडों का निर्देश करते हुए दलील दी जिनका हम ऊपर यह कहते हुए उल्लेख कर चुके हैं कि इस संबंध में विधि पूर्णतया स्पष्ट है कि कोई मुस्लिम विवाह-विच्छिन्न स्त्री केवल इद्दत प्रक्रम तक ही भरण-पोषण पाने की हकदार है न कि उसके पश्चात् । 'मता' के जरिए यह उपबंधित किया गया है कि किसी विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री को जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, केवल सद्भावपूर्ण (परोपकारपूर्ण) उपबंध दिया जाएगा और वह भी पूर्त (दान) के

---

[1] [1986] 1 उम. नि. प. 269 = (1985) 3 एस. सी. सी. 545.

[2] [1979] 1 उम. नि. प. 243 = (1978) 1 एस. सी. सी. 248.

रूप में या उसके पूर्व पति की ओर से अनुग्रह के रूप में न कि उसके ऐसे अधिकार के परिणाम के रूप में जो विवाह-विच्छिन्न पत्नी के लिए उत्पन्न हुआ हो। पवित्र कुरान के अध्याय 2 की सूरह 241 और 242 के आधार पर किए गए विभिन्न निर्वचनों के प्रभाव का **शाह बानो**[1] वाले मामले में उल्लेख किया गया है। **शाह बानो**[1] वाले मामले में यह प्रतिपादित किया गया है कि वर्तमान विधि क्या है। इसमें किए गए उपबंधों और प्रदत्त किए जाने वाले भरण-पोषण के बीच अन्तर का उल्लेख किया गया है। यह अवेक्षा की गई थी कि केवल इद्दत के प्रक्रम तक भरण-पोषण संदेय होगा और यह उपबंध सामान्य परिस्थितियों की स्थिति में ही लागू है जबकि ऐसी विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, 'मता' प्राप्त करने की हकदार होगी। इसी आधार पर इस न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने विभिन्न पाठ्य-पुस्तकों का निर्वचन करते हुए इस प्रकार अभिनिर्धारित किया। इस विधिक स्थिति को देखते हुए हमारा यह मत है कि हम यह नहीं कह सकते हैं कि अन्य कोई स्थिति संभव है और न ही हम अधिनियमिती की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि उपेक्षा करते हुए कोई नया मत व्यक्त करने को तैयार हैं। यद्यपि अधिनियमिती किसी विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री को 'मता' की प्रकृति में भरण-पोषण के जरिए कुछ दिलाने के संबंध में **शाह बानो**[1] वाले मामले में अभिव्यक्त मत के प्रभाव को समाप्त करने के लिए तात्पर्यित है तथापि तथ्यतः अधिनियम के अधीन उपबंध करके न केवल भरण-पोषण के प्रयोजन को कानूनी मान्यता दी गई है अपितु 'उपबंध' को भी। जब अधिनियमिती में इन दोनों अभिव्यक्तियों का प्रयोग किया गया है तो इसका स्पष्ट रूप से यह अर्थ है कि विधानमंडल का यह आशय नहीं हो सकता कि इस न्यायालय द्वारा **शाह बानो**[1] वाले मामले में इन दोनों अभिव्यक्तियों के संबंध में किए गए अर्थान्वयन का लोप कर दिया जाए । इसलिए हमारा यह मत है कि पक्षकारों की ओर से दी गई प्रतिकूल दलील को मान्य नहीं ठहराया जा सकता।

35. **अरब अहमदिया अब्दुल्ला और अन्य** बनाम **अरब बेल मोहमूना सय्यद भाई और अन्य**[2]; **अली** बनाम **सुफैरा**[3]; **के. कुन्हाशिद हाजी** बनाम **अमीना**[4]; **के. जैनुद्दीन** बनाम **अमीना बेगम**[5]; **करीम अब्दुल शेख** बनाम **शहनाज करीम शेख**[6] और **जैतून बी मुबारक शेख** बनाम **मुबारक फखरुद्दीन शेख और एक अन्य**[7] वाले मामलों में अधिनियम की धारा 3(1)(क) और धारा 4 के उपबंधों का निर्वचन करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि कोई विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री अपने भविष्य के लिए ऋजु और युक्तियुक्त उपबंध पाने की हकदार है जो उसके पूर्व पति द्वारा दिया जाएगा और जिसमें ऐसा भरण-पोषण सम्मिलित है जो इद्दत की अवधि के पश्चात् भी जारी रहेगा। यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम की धारा 3(1)(क) के अधीन युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध करने का पूर्व पति का दायित्व केवल इद्दत की अवधि तक के लिए निर्बंधित नहीं है बल्कि विवाह-विच्छिन्न स्त्री अपने भविष्य के लिए युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध के लिए हकदार है जो उसके पूर्व पति द्वारा दिया जाएगा और उसे ऐसा भरण-पोषण इद्दत की अवधि के लिए भी संदत्त किया जाएगा। 'किया जाना' और 'संदत्त किया जाना' शब्दों पर अत्यधिक बल देते हुए इस अर्थ के लिए अर्थान्वयन किया गया कि इससे न केवल इद्दत अवधि के लिए उपबंध करना अभिप्रेत है बल्कि उसके भविष्य के लिए भी युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध किया जाना अभिप्रेत है। पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की एक पूर्ण न्यायपीठ ने **काका** बनाम **हसन बानो और एक अन्य**[8] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया कि अधिनियम की धारा 3(1)(क) के अधीन कोई विवाह-विच्छिन्न मुस्लिम स्त्री भरण-पोषण का दावा कर सकती है जो इद्दत की

---

[1] [1985] 3 उम. नि. प. 543 = (1985) 2 एस. सी. सी. 556.

[2] ए. आई .आर. 1988 गुजरात 141.

[3] (1988) 3 क्राइम्स 147.

[4] 1995 क्रि. ला जर्नल 3371.

[5] (1988) II डी. एम. सी. 468.

[6] 2000 क्रि. ला जर्नल 3560.

[7] 1999 (3) एम. एल. जे. 694.

[8] (1989) II डी. एम. सी. 85.

अवधि के लिए निर्बंधित नहीं है। इसके प्रतिकूल यह अभिनिर्धारित किया गया कि पत्नी उसके अतिरिक्त जो वह अपने विवाह-विच्छेद के समय पहले ही प्राप्त कर चुकी है, भविष्य के लिए ऋजु और युक्तियुक्त उपबंध का दावा करने के लिए स्वतंत्र नहीं है; पति का दायित्व इद्दत की अवधि तक परिसीमित है और यदि उसके पश्चात् वह अपना भरण-पोषण स्वयं करने में असमर्थ है तो उसे अपने नातेदारों या वक्फ बोर्ड के समक्ष जाना चाहिए। उक्त मत **उमर ख़ां बहमामी** बनाम **फतीमुन्निसा**[1], **अब्दुल रशीद** बनाम **सुलताना बेगम**[2], **अब्दुल हक** बनाम **यासिमा तलत**[3] और **मोहम्मद मराहीम** बनाम **रज़िया बेगम**[4] वाले मामलों में बहुमत विनिश्चय द्वारा व्यक्त किया गया है। इस प्रकार न्यायिक राय की प्रबलता उस मत के हक में है जो हमारे द्वारा अधिनियम की धारा 3 के निर्वचन के बारे में व्यक्त किया गया है। ऊपर निर्दिष्ट उच्च न्यायालयों के ऐसे विनिश्चय जो हमारे उक्त विनिश्चय के प्रतिकूल हैं, उलटे जाते हैं।

36. हम अधिनियम की विधिमान्यता की पुष्टि करते हुए अपने निष्कर्षों का संक्षेप में इस प्रकार उल्लेख करना चाहेंगे –

(1) कोई मुस्लिम प्रति विवाह-विच्छिन्न पत्नी के भविष्य के लिए युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध करने का दायी है और इसमें स्पष्ट रूप से उसका भरण-पोषण सम्मिलित है। इद्दत अवधि से बाद के लिए ऐसा कोई युक्तियुक्त और ऋजु उपबंध पति द्वारा अधिनियम की धारा 3(1)(क) के निबंधनों में इद्दत अवधि के भीतर दिया जाना चाहिए।

(2) अधिनियम की धारा 3(1)(क) के अधीन मुस्लिम पति का अपनी विवाह-विच्छिन्न पत्नी के लिए उद्भूत भरण-पोषण के संदाय का दायित्व इद्दत की अवधि तक निर्बंधित नहीं है।

(3) कोई विवाह-विच्छिन्न स्त्री जिसने पुनर्विवाह नहीं किया है और जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, अधिनियम की धारा 4 के अधीन यथा उपबंधित अपने ऐसे नातेदारों के विरुद्ध कार्यवाही कर सकती है जो संपत्तियों के अनुपात में उसका भरण-पोषण करने के जिम्मेदार हैं और जिन्हें मुस्लिम विधि के अनुसार ऐसी विवाह-विच्छिन्न स्त्री की मृत्यु पर विरासत मिलेगी और इसमें उसके बच्चे तथा माता-पिता भी सम्मिलित हैं। यदि कोई नातेदार भरण-पोषण का संदाय करने में असमर्थ हो तो मजिस्ट्रेट भरण-पोषण के संदाय के लिए अधिनियम के अधीन स्थापित राज्य वक्फ बोर्डों को निदेश कर सकेगा।

(4) अधिनियम के उपबंध भारत के संविधान के अनुच्छेद 14,15 और 21 के अतिक्रमणकारी नहीं हैं।

37. परिणामतः रिट याचिका सं. 868/96, 996/86, 1001/86, 1055/86, 1062/86, 1236/86, 1239/86 और 1281/86 जिनके द्वारा अधिनियम के उपबंधों की विधिमान्यता को आक्षेपित किया गया है, खारिज की जाती है।

38. अन्य सभी मामले जिनमें अन्य प्रश्न उठाए गए हैं, इस न्यायालय की समुचित न्यायपीठ के विचार के लिए भेजे जाएंगे।

रिट याचिकाएं खारिज की गईं ।

मह.

---

[1] 1990 क्रि. ला जर्नल 1364.

[2] 1992 क्रि. ला जर्नल 76.

[3] 1998 क्रि. ला जर्नल 3433.

[4] (1993) II डी. एम. सी. 60.